

स्मृति-शेष : महमूद दरवेश

तुमने घोड़े को अकेला क्यों छोड़ दिया ?

गीत चतुर्वेदी

यह महमूद दरवेश के एक कविता संग्रह का शीर्षक भर नहीं है, बल्कि यही वह पंक्ति है, जिसे दरवेश की कविता की टेक समझना चाहिए। छह साल का एक बच्चा अपने पिता के साथ इजरायल से एक गांव छोड़कर भाग रहा है। यहूदी फ़ौज उनके गांवों, मकानों, जीवन को तबाह करते हुए लगातार उनकी तरफ बढ़ रही है। बीच रास्ते में बच्चा पिता से यही सवाल करता है:

*तुमने घोड़े को अकेला क्यों छोड़ दिया
वहां घर के सामने*

पिता जवाब देता है:

*ताकि घर को अकेलापन न महसूस हो मेरे बेटे
जब रहने वाले कहीं और चले जाते हैं
घर मर जाते हैं*

दरवेश तमाम उम्र उसी अकेले छूटे हुए घोड़े को निहारते रहे। दरवेश की कविता का घोड़ा दरअसल, दूसरे देश के कब्जे में चली गई अपनी मातृभूमि की स्मृतियां, जिंदगी को जिंदगी की तरह जी लेने का एक छोटा-सा सपना, इच्छाएं और उम्मीदें हैं।

पिछले 9 अगस्त को फ़लीस्तीन की दिलो-ज़बां कहे जाने वाले कवि महमूद दरवेश का निधन हो गया। 13 मार्च 1941 को जन्मे दरवेश का जीवन निर्वासन से भरा रहा। वर्तमान इजराइल के एक छोटे से गांव गैलिली में उनका जन्म हुआ। 1948 में इजराइल की स्थापना होती है और फ़लीस्तीनी राष्ट्र का स्वप्न देखने वालों या मुसलमानों को उन्हीं की ज़मीन से भगा दिया जाता है। उन्होंने अपना देश खो दिया। एक ऐसा देश, जो सिर्फ़ तक्ररीरों, कागज़ के खालीपन, नक्शों की रेखाओं, शहीदों और निर्दोषों के बहते खून, शहरों के मलबों, कविताओं और गीतों में ही बचा रहा। वह जिंदगी भर अपने देश को अपना कह सकने की लड़ाई

लड़ते रहे। एक इंटरव्यू में उन्होंने कहा है, 'जीते-जी अपने लिए कोई राष्ट्र नहीं पा सका, पर इस बात का सुकून है कि मैंने अपनी भाषा में अपने लिए एक राष्ट्र बनाया। उसके सीवान उसी भाषा में पहचाने।'

कई बरस जेल में गुज़ारने के बाद उन्हें निर्वासित होना पड़ा और वह इतना लंबा चला कि उन्होंने एक कविता में लिखा- अब निर्वासन की लत हो गई है। बिना निर्वासन के समझ नहीं आता, मैं हूँ कौन।

वह मूलतः लिरिकल कवि थे, प्रेम और विद्रोह के गीत गाते। उनकी कई कविताएं अरब दुनिया में बाक्रायदा गाई जाती हैं। लोकप्रियता इतनी कि उन्हें सुनने के लिए एक लाख की भीड़ इकट्ठी हो जाती।

साठ के दशक में आया उनका पहला संग्रह 'बिना डैनों की चिड़िया' से उन्हें अचानक प्रसिद्धि मिली। उस संग्रह की कविता 'पहचान पत्र' का हिंदी में ही कई-कई बार अनुवाद हुआ है। इसमें कवि एक अरब के रूप में अपनी पहचान बताता है। उसकी पंक्तियां याद होंगी-

*मैं किसी से घृणा नहीं करता
न ही किसी का कुछ छीनता हूँ
पर जब भूख लगेगी मुझे
मुझ पर कब्ज़ा करने वालों का मांस ही होगा मेरा भोजन
सावधान मेरी भूख
मेरे क्रोध से सावधान*

पहचान का यह संकट उनकी कविताओं में बार-बार आता है। यह उनका निजी संकट नहीं, यह पूरे एक देश और दरबंद हो गए लाखों लोगों का सवाल है। 'पहचान पत्र' से लेकर उनकी संभवतः आखिरी कविता 'पासा खेलने वाले' (जो आप अगले पृष्ठों में पढ़ सकते हैं) तक में यही सवाल अलग-अलग रूप में आया है।

*वैसे होता कौन हूँ मैं
खालीपन को निराश करने वाला*

यही सवाल कई बार उनसे एक पत्थर बन जाने की लालासा देता है, तो कभी उन्हें एक नया नाम दे देता है। पहचान की खोज में वह परंपराओं के भी पीछे जाकर खोज आते हैं। इस तलाश में वह पाते हैं:

*मुझे धीरे-धीरे निकालो
मुझे धीरे-धीरे मारो
मैं आदम हूँ जिसके पास दो स्वर्ग थे
जिन्हें उसने दोनों बार खो दिया*

होते हुए भी न होने जैसा जीवन जीने को अभिशप्त रहना और पाने से पहले ही खो देने का अहसास उनके लिए देश है। फ़लीस्तीन उनके यहां निर्वासन, मनुष्य की दुर्गति, विस्थापन के चरम दुख और बेदखली का रूपक है। इस बेदखली में कवि अनुपस्थित का चेहरा धरकर उपस्थित होता है:

अनुपस्थित-सा

पहुँचता हूँ मैं अनुपस्थित के घर में

महमूद दरवेश को ज्यादातर उनकी शुरुआती कविताओं के लिए जाना जाता है। जिन कविताओं में वह मुखर हैं, ऊँची आवाज़ में शरद से सुगंध और रात से एक स्वप्न मांगते हैं, बंदूक की मेगज़ीन से हल्का एक दिल मांगते हैं और अपनी उपस्थित-अनुपस्थित स्थिति का खाका बनाते हैं। पर 1985 के बाद उनकी कविताओं का टोन बदलता है। वह कहते हैं, 'यह बदलाव पेरिस में होना शुरू हुआ। पेरिस के दिनों में मेरे दो संग्रह आए-ग्यारह ग्रह और तुमने घोड़े को अकेला क्यों छोड़ दिया। मैं मिथकों के पास गया। भुला दिए गए इतिहास को फिर से जीने की कोशिश करने लगा। मुझे ज़मीन के साथ जुड़ा अतीत और अतीत के साथ जुड़ी ज़मीन के पक्ष में खड़ा होना था, भाषा की ज़मीन से ज़मीन की भाषा के पक्ष में। लेकिन यह कोई नॉस्टेल्लिज़िया नहीं, बल्कि वर्तमान और भविष्य को अतीत के साथ जोड़ना था।' उनकी कविताओं में आक्रोश के साथ-साथ रहस्य का भी पुट आने लगता है। यूरोपीय, इस्लामिक और ज़ियोनिस्ट मिथकों का वह बहुतायात में प्रयोग करते हैं। बैरूत पर इज़राइली हमले के बाद वह बार-बार कविता की सार्थकता पर खुद से वैसे ही सवाल करते हैं, जैसा द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद चेस्वाव मिवोश ने किया था -

उस कविता का क्या मतलब

जो देश या लोगों को न बचा सके?

और बार-बार पाते हैं कि बर्बरता के खिलाफ़ कविता एक प्रतिरोध-भर है, जो मनुष्य की नश्वरता के साथ उसी तरह जुड़ी होती है, जैसे दीवार के बीच दरार से निकली घास की एक पत्ती, जो अपनी बगल से गुज़र रही सेनाओं के क्रदमताल को अपनी हरियाली से निरर्थक बता रही है। 'द प्रोग्रेसिव' को दिए इंटरव्यू में वह कहते हैं, 'पहले मुझे लगता था कि कविता हर शै को बदल सकती है, यहां तक कि इतिहास को भी बदलकर उसे ज्यादा मानवीय बना सकती है। मुझे यह लगता है कि कवियों में इस विश्वास का बना रहना बहुत ज़रूरी है, लेकिन यह भी सच है कि अब मुझे यह भी लगने लगा है कि कविता किसी चीज़ को नहीं बदल सकती, सिवाय कवि के।'

दरवेश का गद्य पढ़ते समय कविता की भूमिका के इस सवाल से बार-बार गुज़रना होता है। हर कवि के जीवन में ऐसा समय आता है, जब उसे कविता से मोहभंग होता दिखता है, लेकिन भीतर उतरकर देखा जाए, तो क्या वह सचमुच कविता से मोहभंग होता है या उस समय और समाज से जिससे वह उम्मीदें रखकर दीवार में रहती दरार के बीच से उगकर आई घास की एक पत्ती से सबसे हरा रंग भर रहा होता है। जब उसे पता चलता है कि उसी की भाषा में उसी रंग के खिलाफ़ सबसे बड़ा षडयंत्र किया जा रहा है। जब वह पंख से बना एक पिंजरा देख लेता है और शहरों में सिर्फ़ यही संभावना दिखती है कि वहां ग़रीब और ग़रीब होते जाएंगे, वंचितों को अभी वंचना की कई और पीढ़ियों से गुज़रना है।

निराशा के गहन क्षणों में ही एक कवि यह कहता है :

आखिरी सरहद के बाद कहां जाएंगे हम आखिर

आखिरी आसमान के बाद

उड़कर कहां जाएंगी चिड़ियां आखिर?

महमूद दरवेज की सात कविताएं

मेरे शब्द

जब मिट्टी थे मेरे शब्द
मेरी दोस्ती थी गेहूं की बालियों से

जब क्रोध थे मेरे शब्द
जंजीरों से दोस्ती थी मेरी

जब पत्थर थे मेरे शब्द
मैं लहरों का दोस्त हुआ

जब विद्रोही हुए मेरे शब्द
भूचालों से दोस्ती हुई मेरी

जब कड़वे सेब बने मेरे शब्द
मैं आशावादियों का दोस्त हुआ

पर जब शहद बन गए मेरे शब्द
मक्खियों ने मेरे होंठ घेर लिए

जरुशलम में

जरुशलम में यानी
प्राचीन दीवारों के भीतर ही भीतर
चहलकदमी करता हूँ मैं एक युग से दूसरे युग तक
स्मृतियां नहीं हैं मेरे पास जो रास्ता दिखा सकें
स्वर्ग की तरफ जाते पैगंबर पवित्रता का इतिहास बता रहे हैं
लौटकर आने पर उनमें हताशा और अवसाद कम दिखते हैं
क्योंकि प्रेम और शांति पवित्र होते हैं
और शहर में आ रहे हैं
मैं एक ढलान में उतर रहा हूँ और खुद ब खुद सोच रहा हूँ
व्याख्याता कभी इस पर सहमत क्यों नहीं हो पाते
कि रोशनी पत्थर के बारे में क्या कहती है?

क्या मद्धम आंच में जलते एक पत्थर से भभक उठते हैं युद्ध?
 मैं अपनी नींद में चलता हूँ मैं अपनी नींद में घूरता हूँ
 मैं देखता हूँ मेरे पीछे कोई नहीं आगे भी कोई नहीं
 ये सारी रोशनी मेरे लिए है मैं चलता रहता हूँ और हल्का हो जाता हूँ
 मैं उड़ता हूँ और कोई और बन जाता हूँ, पूरी तरह बदला हुआ
 शब्द अंकुरित होते हैं जैसे ईसा के दूत के मुंह से घास
 अगर तुम भरोसा नहीं करते, तो कभी भरोसा नहीं कर सकते
 मैं चलता हूँ जैसे कि कोई और
 और मेरा घाव बाइबल के जमाने का कोई सफ़ेद गुलाब
 और मेरे हाथ जैसा हवा में आड़े-तिरछे मंडराते दो कबूतर
 जिन्होंने थाम रखा है पूरी पृथ्वी को
 मैं चलता नहीं, उड़ता हूँ किसी और में तब्दील हो जाता हूँ
 यह कोई जगह नहीं, कोई समय नहीं
 तो मैं कौन हूँ?
 जब तक यह उत्थान है तब तक मैं नहीं
 खुद से कहता हूँ सिर्फ़ मुहम्मद पैग़ंबर ही बोल सकते थे शास्त्रीय अरबी- तो क्या हुआ-
 तो क्या हुआ- चिल्लाती है एक महिला सैनिक
 तुम फिर आ गए? मैंने तो तुम्हें मार डाला था न?
 मैं कहता हूँ: हां तुमने मुझे मार डाला था... पर मैं भी तुम्हारी तरह, भूल गया मरना

पासपोर्ट

वे मुझे परछाइयों में नहीं पहचान पाते
 सारा रंग चूस लिया है उन्होंने इस पासपोर्ट से
 और मेरे घावों को बना दिया है तमाशा
 तस्वीरें खींचने का शौक रखने वाले सैलानियों के वास्ते
 वे मुझे पहचान नहीं पाते
 आह... मेरी हथेलियों को मत छोड़ो सूरज से पहले
 पेड़ पहचानते हैं मुझे
 चांद की तरह पीला करके मत छोड़ो मुझे

मेरी हथेलियों के पीछे-पीछे सारी चिड़ियां
 जो इतनी दूर हवाई अड्डे के दरवाजे तक आ गईं
 गेहूं के सारे खेत सारे कारवास क़ब्र के सारे पत्थर
 सारी कंटिली सीमाएं
 लहराते हुए रूमाल सारी आंखें
 ये सब थीं मेरे पास
 लेकिन मेरे पासपोर्ट से गिरा दिया उन्होंने इन सबको

छीन लिया मेरा नाम और पहचान
उस ज़मीन पर जिसे मैंने अपने हाथों से सींचा मैंने
जोब* चिल्लाया आज पूरे आसमान को गुंजाते हुए
सज्जनों, मसीहाओं,
मेरा उदाहरण न दो, न बनाओ
पेड़ों से मत पूछो उनका नाम
घाटियों से मत पूछो कौन थी उनकी मां

मेरे माथे से फूटती है हरियाली की रोशनी
मेरी हथेलियों से किलक कर निकलता है नदियों का पानी
लोगों का दिल ही मेरी ही मेरी पहचान है
ले जाओ मेरा पासपोर्ट.

रीता और राइफल

रीता और मेरी आंखों के बीच
एक राइफल है
जो भी कोई जानता है रीता को
झुकता है और खेलता है
शहद जैसे रंग वाली आंखों में बसी पवित्रता से
मैंने चूमा रीता को
जब वह जवान थी
मुझे याद है कैसे वह करीब आई थी मेरे
और कैसे मेरी बांहों ने घेरा था सबसे खूबसूरत गजरे को
और मैं याद करता हूँ रीता को
जैसे कोई गौरैया याद करती है किसी शाख को
आह रीता,
हम दोनों के बीच हैं दसियों लाख गौरैयां और छवियां और चौपाल
जिन पर एक राइफल ने दाग दीं गोलियां

मेरे मुंह का निवाला था रीता का नाम
मेरे लहू में एक उत्सव थी उसकी देह
और दो साल तक खोया रहा मैं रीता में
और दो साल तक सोती रही वह मेरी बांह पर
और हमने सबसे खूबसूरत प्यालों पर वादे लिखे
और होठों की शराब में हम जलते रहे
और इस तरह एक बार फिर जन्म लिया हमने

आह रीता
क्या न हो सकता अगर इस राइफल से पहले
मेरी आंखें बदल जातीं तुम्हारी आंखों से
एकाध किसी झपकी या शहद के रंग वाले बादलों में?

यह एक समय की बात है,
झुटपुटे का सन्नाटा
और सुबह ही मेरा चांद चला गया मुझसे बहुत दूर
शहद के रंग वाली उन आंखों की तरफ़
और शहर ने सारे गायकों को बहा दिया
और रीता को भी

रीता और मेरी आंखों के बीच
एक राइफल है

सिर्फ़ इराक़

(29 मार्च 2003)

मुझे याद आता है खाड़ी में बेमतलब चीखता हुआ अस-सय्यब* :
इराक़, इराक़, सिर्फ़ इराक़
जवाब में एक अनुगूँज के सिवा कुछ सुनाई नहीं देता
मुझे याद आता है अस-सय्यब सुमेरियन जगहों पर

धुंध के बांझपन से जीत गई एक औरत
वसीयत में हमें देती है पृथ्वी और निर्वासन...
चूँकि कविता का जन्म इराक़ में हुआ था
सो मेरे दोस्त, अगर कवि बनना है, तो पहले इराक़ी बनो

मुझे याद आता है अस-सय्यब
जैसा सोचा था वैसी नहीं मिली उसे जिंदगी
तिगरिस और यूफ्रेट्स के बीच
और उसने अमरता की बूटियों के बारे में भी नहीं सोचा था
गिलगमेश* की तरह और उसने दूसरे जन्म के बारे में भी नहीं सोचा था

मुझे याद आता है अस-सय्यब
हमुराबी** के कूटशब्दों का अध्ययन करता
छुपाता अपने शेर और अपनी क्रब्र की तरफ़ बढ़ता

मुझे याद आता है अस-सय्यब
बुखार में जकड़ा हुआ क्रोध में कहता है
'हलुकू की सेना के लिए खाना बना रहे हैं मेरे भाई
और वहां उनके सिवाय कोई नौकर नहीं...'

मुझे याद आता है अस-सय्यब
हमने जिंदगी निबाहने का ऐसा किसी तरीके का स्वप्न नहीं देखा
जिसे मधुमक्खियों ने अयोग्य करार दिया हो
हमारी अनुपस्थिति पर फिरते दो नन्हें हाथों से
ज्यादा कोई सपना नहीं देखा हमने

मुझे याद आता है अस-सय्यब
अपनी क्रब्रों से जागते हैं मारे जा चुके लोहार
और हमारे लिए जंजीरें बनाते हैं

मुझे याद आता है अस-सय्यब
यक्रीनन कविता एक क्लेश होती है
और निर्वासन उसकी जुड़वा

जिंदगी, जिंदगी जैसी हो
और मरा जा सके अपने तरीके से
इससे ज्यादा कोई सपना नहीं देखा हमने:
इराक़, इराक़, सिर्फ़ इराक़

+ बद्र सकीर अस-सय्यब (1926-1964): महान इराक़ी कवि, अरब कविता को पारंपरिक छंदों से तोड़कर आधुनिक और क्रांतिकारी तेवर देने वाला कवि। जिसकी कविताएं इराक़ में प्रतिबंधित रहीं। इस कारण उसकी कविता में प्रतीकों का गहरा इस्तेमाल दिखता है। इसकी काव्यपंक्ति 'लोहे और सोने से होता है हमारे समय का संचालन' का अरबी कविता में भरपूर उद्धरण हुआ। संभवतः पहला अरबी कवि, जिसने अरबी मिथकों को कविता में प्रतीकों की तरह इस्तेमाल किया। विश्व कविता को अरबी में लाने वाला सबसे बड़ा अनुवादक। कविताओं के साथ-साथ अनुवादों के लिए भी मुक़दमें झेले। सरकारी प्रताड़नाओं, बेरोज़गारी, भुखमरी और रोगों के कारण कम उम्र में ही निधन। इराक़ पर अमेरिकी हमले के बाद दरवेश ने यह कविता अस-सय्यब की मशहूर नज़्म 'बारिश, बारिश, सिर्फ़ बारिश' की ज़मीन पर लिखी थी।

* गिलगमेश : बेबीलोन के एक महाकाव्य का मिथकीय पात्र।

** हमुराबी: बेबीलोन का राजा, जिसने कुख्यात क़ानून संहिता लिखी थी।

घेरेबंदी में

यहां पहाड़ की ढलानों पर
झुटपुटे और समय की तोप का सामना करते हुए
टूटी हुई परछाइयों से बने बगीचों के बिल्कुल पास
हम वही करते हैं जो कि क़ैदी करते हैं,
और जो कि बेरोज़गार करते हैं:
हम उम्मीद की फ़सल उगाते हैं
* * *

एक देश सुबह की तैयारी कर रहा है
हम खोते जाते हैं अपनी समझ
जीत के क्षण के बहुत नज़दीक से ताकते हुए:
हमारी रात में कोई रात
गोलाबारी से रोशन नहीं होती
सतर्क हैं हमारे शत्रु और
एक कालकोठरी के अंधेरे में
हमारे लिए रोशनी जलाते हैं
* * *

यहां कोई 'मैं' नहीं
यहां आदम याद करता है
अपनी चिकनी मिट्टी से निकली धूल
* * *

तुम जो कि दरवाज़े पर खड़े हो, भीतर आ जाओ
हमारे साथ पियो अरबी कॉफ़ी
फिर महसूस करोगे कि तुम हमारे जैसे ही हो
तुम जो कि खड़े हो दरवाज़े पर
हमारी सुबहों से निकलकर आओ
तुम्हें देखकर हम आश्वस्त होंगे एक बार फिर
कि हम तुम्हारी तरह ही हैं
* * *

जब जहाज़ ओझल हो जाते हैं, सफ़ेद
सफ़ेद कबूतर उड़ते हैं और
जाकर स्वर्ग के गाल धो आते हैं
खुले हुए डैनों के साथ रोशनी में नहाकर

लौटते हैं वे,
आसमान और खेलों की मिलिक्यत वापस पाते हैं
ऊंचा, खूब ऊंचा उड़ते हैं
सफ़ेद बचे हुए सफ़ेद कबूतर
काश, आसमान असली होता
(दो बमों के बीच से गुज़रते आदमी ने मुझसे यही कहा)
* * *

सैनिकों के पीछे खड़े साइप्रस के पेड़, मीनारें
आसमान को धराशायी होने से बचाती हैं
इस्पात से बनी बाड़ के पीछे पेशाब करते हैं सैनिक
टैंक की चौकस आंखों की निगरानी में
और शरद ऋतु का एक दिन
खत्म करता है अपने सुनहरे भटकाव को
चर्च जितनी चौड़ी एक गली में
रविवार की सामूहिक प्रार्थना के बाद
* * *

(एक हत्यारे से)
जिसे तुमने मारा
उसके चेहरे को अगर गौर से देखते तुम
और थोड़ा विचार करते
तुम्हें याद आ जाती गैस चेंबर में तुम्हारी मां
तुम मुक्त हो जाते बंदूक के तर्कों से
और बदल जाता तुम्हारा मन:
अपनी पहचान वापस पाने का यह तो कोई तरीका नहीं
* * *

पासा खेलने वाला

(संभवतः दरवेश की आखिरी कविता के कुछ अंश)

आसमान जब राख के रंग का हो जाता है
और मैं देखता हूँ एक गुलाब
दीवार के बीच किसी दरार से निकल आया है औचक
तब मैं यह नहीं कहता कि आकाश का रंग राख-सा है
मैं गौर में पढ़ता हूँ गुलाब को और कहता हूँ:
वाह, क्या बात है !

और रात के मुहाने पर कहता हूँ दोस्तों से:
अगर कहीं कोई सपना है, तो उसे हम जैसा होना चाहिए

मैं नहीं कहता: उस दुनिया में जिंदगी बिल्कुल असल है और कल्पनाओं में भरी हुई
मैं कहता हूँ: जिंदगी यहां भी संभव है
और संयोग ही था कि यह ज़मीन पवित्र बन गई:
यहां की झीलें और पहाड़ और पेड़
किसी ऊपरी जगत की नक़ल भर नहीं
बल्कि पैगंबर ने यहां धरे थे पांव
और जब प्रार्थना की थी एक चट्टान पर तो चट्टान रोई थी
पहाड़ दंडवत हो गया था आस्था से
फिर बेहोश होकर गिर पड़ा था

और संयोग ही था यह कि
ज़मीन की ढलान से ख़ालीपन का एक संग्रहालय बन गया
सड़ते रहे हज़ारों सैनिक दोनों तरफ़
हमला करो का हुक्म देने वाले दो नेताओं की हिफ़ाज़त करते हुए
दोनों नेता रेशम के दो तंबुओं में बैठे दोनों तरफ़ की लूट के माल का इंतज़ार करते
लगातार मरते रहे सैनिक पर कभी पता नहीं चल पाया
उसमें से कौन जीता

और संयोग ही था कि बचे रह गए कुछ क्रिस्सागो
जो सुनाते हैं अब भी:
अगर अमुक-अमुक ने तमुक-तमुक पर जीत पा ली होती
तो हमारे मानवीय इतिहास का पता कुछ और होता

ओह मेरी भूमि-तुझे हरा देखना प्यारा लगता है मुझे-
पानी और रोशनी में लहराता एक सेब
हरा
तुम्हारी रातें हरी तुम्हारी भोर हरी
इसीलिए रोपो मुझे बहुत सहेजकर
बिल्कुल मां जैसी उदारता के साथ मुट्ठी भर हवा में
आखिरकार मैं तुम्हारा एक बीज ही हूँ हरा

और एक से ज़्यादा कवि हैं इस कविता के
और इसमें छंद-लय की कोई ज़रूरत नहीं

जो कहता हूँ तुमसे

वह कहने वाला कौन होता हूँ मैं
अगर नहीं होता यहां
तो वह नहीं होता जो हूँ मैं

वह हवाई जहाज़ टकरा जाता कहीं उस सुबह
जिसमें मैं बैठा था
पर देखो मेरा सौभाग्य मैं सोता रहा
नहीं देख पाता मैं दमिश्क या काहिरा
या लूत्र या दूसरे जादुई शहर

अगर धीमा चलता
तो छेद देती मेरी परछाई को
नींद विहीन देवदार के पीछे से कोई राइफल

ज़्यादा तेज़ चलता
तो बम का कोई छर्चा बन जाता मैं
या सरसराती हुई सी कोई उत्कंठा

बहुत ज़्यादा सपने देखता
तो संभव है खो देता अपनी याददाश्त
सौभाग्य है मेरा कि मैं अकेले सोता हूँ
और अपनी देह की सुनता हूँ
और समय रहते दर्द को को पहचान लेने की अपनी प्रतिभा में यक्रीन करता हूँ
कि बुला लूँ डॉक्टर को
मरने के ठीक दस मिनट पहले...
दस मिनट... संयोग से पर्याप्त होंगे मेरे लिए
जीने के वास्ते
कि मैं सारे ख़ालीपन को निराश कर सकूँ

वैसे होता कौन हूँ मैं
ख़ालीपन को निराशा करने वाला
कौन हूँ मैं? कौन हूँ मैं?
* * *

अनुवाद : गीत चतुर्वेदी

महमूद दरवेश का गद्य

भूल जाने के लिए इसे याद रखूं

अनुवाद : गीत चतुर्वेदी

महमूद दरवेश का गद्य उनकी कविता की ही तरह बेहद तीखा, तिलमिला देने वाला, आक्रोश और बेबसी से बना, उसके बावजूद एकायामी न होकर अपने बहुपरती यथार्थ की जटिल संरचनाओं को खोलता हुआ कलात्मक गद्य है। गद्य की उनकी कई किताबें चर्चित हैं, लेकिन 'जर्नल ऑफ एन ऑर्डिनरी ग्रीफ' और 'मेमरी फॉर फॉरगेटफुलनेस' उनके सर्वश्रेष्ठ गद्य की झांकी हैं। यहां दिए जा रहे अंश 'मेमरी फॉर फॉरगेटफुलनेस' से हैं। यह कोई एक विधा नहीं। संस्मरण, डायरी, उपन्यास, एकालाप, कविता के टुकड़े या पूरी एक लंबी कविता है।

फ़लीस्तीनियों के मददगार बने लेबनान पर 1982 में इज़राइल ने आक्रमण कर दिया था और दो महीने से ज़्यादा समय तक बैरूत को घेरे रखा था। तीन साल से ज़्यादा समय तक चला यह युद्ध बाद में लेबनान में गृहयुद्ध में बदल गया था। इस कारण फ़लीस्तीनी मुक्ति मोर्चा को लेबनान छोड़ना पड़ा था। उस समय दरवेश ट्यूनीशिया चले गए। 1985 में पेरिस के एक फ्लैट में अलस्सुबह उठकर दरवेश ने यह किताब लिखनी शुरू की थी, और लगातार नब्बे दिनों तक, अपने कमरे से बाहर निकले बिना, वह इसे लिखते रहे थे।

यह किताब एक सपना देखकर उठने, पूरा दिन युद्ध के शोर में मनुष्यता की तरह उजाड़ हो गई बैरूत की गलियों में भटकने, कागज़ पर बिसूरते सफ़ेद ख़ालीपन को स्मृतियों की भाप से भरने, बाड़ के उस तरफ़ क़ैद पड़े एक देश को निहारते हुए मुरझाती उंगलियों की पोर पर सूर्यास्त, सुबह और धड़कनों को गिनते हुये रात को वापस एक सपने की गोद में सिर रखकर सो जाने का मजमून है। यह युद्ध के दौरान बैरूत में बीते एक दिन का आख्यान है, जिसमें बम, गोली, लड़ाकू जहाज़, नारे, पोस्टर, उम्मीद, निराशा, तंज़, रंज, मलबा, शहर और ताबूत हैं। किसी प्रतीक में नहीं, अपने असली रूप में। लेकिन फिर भी अर्थ यहां किसी व्याख्या में क़ैद नहीं। अपनी निराशा

में बैरूत का बदलता चेहरा हमारे किसी भी बदलते शहर के चेहरे जैसा ही दागदार है। शहर के भीतर खोए हुए शहर को खोजता एक शहर। मातृभूमि की तलाश को एक अदद घर की तलाश से अलग मानती हुई तलाश। युद्ध से हैरान और शांति की राजनीति से परेशान एक अकेले अजनबी का रुदन, उस शहर की गलियों में, जो उसे खारिज करती हैं।

यहां दरवेश फ़लीस्तीनी लिबरेशन ऑर्गेनाइजेशन की कार्यप्रणाली पर सवाल भी उठाते हैं, और अरब राष्ट्रवाद के नाम पर अरब दुनिया की अवसरवादिता को भी बेनक्राब करते हैं।

पड़ोस की सारी चिड़ियां सुबह छह बजे जाग जाती हैं। जब से उन्होंने खुद को सुबह की रोशनी में अकेला पाना शुरू किया है, तब से वे तटस्थता के गीत गाने की रिवायत का बाक्रायदा पालन कर रही हैं। रॉकेटों के इन धमाकों के बीच वे दरअसल किनके लिए गाती हैं? वे गुजरी हुई रात की प्रकृति के लिए गाती हैं। वे खुद के लिए गाती हैं, हमारे लिए नहीं। पर क्या इससे पहले हम कभी इस बात का अहसास कर पाए? जलते हुए शहर के धुएं के बीच चिड़ियां अपनी खुद की जगह को साफ़ करती हैं, और आवाजों के आड़े-तिरछे तीर उन्हें बम के खोल पर चस्पा कर देते हैं और आसमान के नीचे सुरक्षित पृथ्वी की ओर छोड़ देते हैं। हत्यारे को हत्या करने के लिए, लड़ाके को लड़ने के लिए, चिड़ियों को गाने के लिए। मैं अलंकृत भाषा की अपनी तलाश को विराम दे देता हूँ। अर्थों की तलाश को मैं पूरी तरह रोक देता हूँ क्योंकि युद्ध का सार ही होता है प्रतीकों को पूरी तरह नष्ट करना, मानवीय रिश्तों, स्थानों, समय को प्रकृति की बिल्कुल शुरुआती अवस्था तक पहुंचा देना, हमें विवश कर देना कि हम सड़क पर टूटी हुई पाइप के फूटते फव्वारे से खुद को खुश करने की कोशिश करें।

ऐसी स्थितियों में पानी हमारे पास करिश्मे की तरह आता है। कौन कहता है कि पानी का रंग नहीं होता, गंध नहीं होती, स्वाद नहीं होता? जैसे-जैसे प्यास खुलती है, पानी का रंग भी वैसे-वैसे ही खिलता है। पानी में चिड़ियों की आवाज़ का रंग होता है- खासकर गौरैयाओं की- समंदर की ओर से आने वाली चिड़ियां, जो इस जंग की तरफ़ बिल्कुल ध्यान नहीं देतीं, जब तक कि उसकी अपनी जगहें सुरक्षित हैं। और पानी में पानी का स्वाद होता है। पानी की सुगंध दोपहर की उस हवा की सुगंध होती है, जहां गेहूं की बालियां लहलहा रही होती हैं, जिन पर उम्मीद की रोशनी के चकत्ते छितराए होते हैं, रोशनी जो कि दरअसल बहुत नीचे से उड़ रही एक छोटी-सी गौरैया के डैनों से फूट रही है। जरूरी नहीं कि हर चीज़ जो उड़ती हो, वह हवाई जहाज़ ही हो। (शायद अरबी भाषा में सबसे बुरा शब्द ताइरा है, ताइरा यानी हवाई जहाज़, ताइर यानी चिड़िया का स्त्रीलिंगी शब्द।) चिड़ियां अपनी पीठ पर गाने लेकर उड़ती हैं, सेनाओं के तोपखानों की चिंघाड़ों से बेफ़िक्र। कौन कहता है कि पानी के पास कोई रंग, गंध या स्वाद नहीं होता है और हवाई जहाज़ चिड़िया का स्त्रीलिंगी शब्द मात्र है?

पर अचानक सारी चिड़ियां चुप हो जाती हैं। जब उड़ते हुए छरें बरसकर फटना शुरू होते हैं, वे अपनी चहचहाहट और सुबह-सुबरे की उड़ानों को रोक देती हैं। क्या वे लोहे की चिंघाड़ के कारण चुप हैं या नाम और गुण के इस अजीब बेतुकेपन के कारण? लोहे और चांदी के पंखों से बने डैनों के मुकाबले सिर्फ पंखों से बने दो डैने? लोहे के तारों से बनी नाक के मुकाबले गीतों से बनी एक चोंच? रॉकेट की खेप के मुकाबले गेहूं के बीज? चिड़ियों ने गाना छोड़ दिया है और युद्ध की तरफ़ देखने लगी हैं, क्योंकि उनका आसमान भी अब सुरक्षित नहीं रहा।

* * *

कॉफी को कभी जल्दबाजी में नहीं पीना चाहिए। यह समय की बहन होती है और उसे उसी तरह धीरे-धीरे, चुस्कियां लेते हुए पीना चाहिए। कॉफी स्वाद की आवाज है, सुगंध के लिए बनी आवाज। यह विपश्यना है और आत्मा व स्मृतियों में गहरे धंसना है। और कॉफी एक आदत भी है, सिगरेट के साथ। इसके साथ एक और आदत जुड़ी होती है- अखबार के रूप में।

कहां है अखबार? सुबह के छह बज चुके हैं। मैं खुद किसी नर्क में विराजा हूं। खबर तो वही होती है, जो सुनने के बजाए पढ़ी जाए। और जब वह दर्ज की जाती है, घटना ठीक वही घटना नहीं रह जाती। मैं एक ऐसे शख्स को जानता हूं, जो इजराइली मामलों में शोध कर रहा था और वह इसे महज 'अफवाह' मानता रहा है कि बैरूत पर क्रब्जा कर लिया गया है क्योंकि वह ऐसी किसी भी बात को सच नहीं मानता था, जब तक कि वह हिब्रू में न लिखी गई हो। और चूंकि इजराइली अखबार उस तक पहुंच नहीं रहे थे, सो वह यह मान ही नहीं रहा था कि बैरूत पर क्रब्जा कर लिया गया है। पर मैं ऐसी किसी दीवानगी से गिरफ्तार नहीं। मेरे लिए तो सुबह का अखबार एक लत है। कहां है अखबार?

लड़ाकू जहाजों का उन्माद बढ़ रहा है। आसमान पागल हो गया है। बिल्कुल बनैला। यह सुबह एक चेतावनी बन कर आई है कि आज सृष्टि का आखिरी दिन है। वे अगला हमला कहां करने वाले हैं? वे कहां हमला नहीं करेंगे? क्या हवाई अड्डे के आसपास का पूरा इलाका बम के सारे छरों को जज्ब करने के लिए काफ़ी है, समंदर का क्रल्ल कर देने के लिए भी? मैं रेडियो चलाता हूं और मजबूर हूं कि खुशनुमा विज्ञापन सुनें- मेरिट सिगरेट, ज्यादा खुशबू, कम निकोटीन। सिटीजन घड़ियां- आपका सही समय आ गया। मार्लबोरो पीजिए, आनंद में रहिए। हैल्थ मिनरल वाटर-ऊंचे पहाड़ों से आई है सेहत आपके लिए। लेकिन पानी कहां हैं? मोटे कालों रेडियो की एनाउंसर औरतें इतना शर्माकर बोलती है कि लगता है, अभी नहाकर निकली हैं या किसी गर्मागर्म बेडरूम से- बैरूत पर भीषण बमबारी।

बैरूत पर भीषण बमबारी? क्या एक साधारण समाचार कार्यक्रम में एक साधारण युद्ध के साधारण दिन की साधारण खबर के रूप में इसका प्रसारण किया जा रहा है? मैं बीबीसी लगाता हूं। मुर्दा आवाजों के बीच पाइप पीने की आवाज भी श्रोताओं को सुनाई दे रही है। शॉर्टवेव पर प्रसारण के बाद मीडियम वेव पर परिवर्धित होने के बाद ये आवाजें एक बेढंगे कैरीकेचर की तरह लगती हैं- *हमारे संवाददाता का कहना है कि युद्ध पर नज़र रखने वालों को जो भी कुछ दिख रहा है, उससे साफ़ दिख रहा है कि जो भी दिख रहा है, वह साफ़ है, हालांकि प्रवक्ता का कहना है कि जो भी घटनाएं घट रही हैं उन तक पहुंच पाना बहुत मुश्किल है, जिससे यह साफ़ इशारा मिलता है कि युद्ध कर रहे दोनों ही पक्ष यह साफ़ कोशिश कर रहे हैं कि वे अपने द्विअर्थी शब्दों के ज़रिए कोई ऐसी गुंजाइश न छोड़ें जिससे कि अज्ञात पायलटों द्वारा उड़ाए जा रहे लड़ाकू जहाजों को पता न लग जाए, लेकिन हमें यह भी साफ़ दिख रहा है, बल्कि हम तो कंपर्म हैं कि कुछ लोगों ने आज बहुत ही खूबसूरत पोशाकें पहनी हैं। औपचारिक-सी यह अरबी भाषा मुहम्मद अब्द अल-वहाब के एक बहुत ही आम बोल वाले गीत के साथ समाप्त होती है, सटीक जज़्बात के साथ-आओ मिलो मुझसे या बताओ मैं कहां मिलूं तुमसे/या बताओ कि मैं कहां जाऊं, ताकि तुम्हें छोड़ सकूँ अकेला।*

एक जैसी, सारी एक जैसी आवाजें। समुद्र का वर्णन करती रेत। बिना किसी पछतावे के सुगठित सुसंस्कृत आवाजें, मौत का वर्णन ऐसे करती हुई, मानो मौसम का वर्णन हो, पर उस तरह नहीं, जैसे घुड़दौड़ या मोटरसाइकिल रेसिंग का वर्णन। लेकिन मैं क्या खोज रहा हूं? बार-बार दरवाजा खोलता हूं, लेकिन अखबार नहीं मिलता। जिस समय चारों ओर इमारतें धराशायी हो रही हों, मैं क्यों अखबार खोज रहा हूं? क्या गिरती हुई ये इमारतें सब कुछ नहीं लिख दे रहीं?

यह पूरी तरह सही नहीं। इस दोज़ख में भी जो अखबार खोज रहा है, वह दरअसल एक अकेली मौत से सामूहिक मौत की तरह भाग रहा है। दरअसल वह एक जोड़ी इंसानी आंखें खोज रहा है, जिससे वह सत्राटे को साझा कर सके या दोतरफ़ा संवाद कर सके। वह दरअसल अपनी मौत में किसी क्रिस्म की हिस्सेदारी खोज रहा है, एक ऐसा गवाह जो सारे सबूत जमा कर सके। वह लाश के ऊपर लगाने के लिए क़ब्र का एक पत्थर खोज रहा है। उस आदमी को खोज रहा है जिसे घोड़ों के गिर जाने की ख़बर हो। वह चुप्पी और बोल की भाषा खोज रहा है, और खोज रहा है एक निश्चित मौत के लिये एक कम उबाऊ इंतज़ार।

मैं खुद से झूठ बोल रहा हूँ: मुझे अपने आसपास का वर्णन खोजने की कोई आवश्यकता नहीं। सच बात तो यह है कि मैं इन मलबों के बीच भहरा जाने की आशंका से आतंकित हूँ, उस कराह का शिकार बन जाने से जिसे कोई सुन नहीं सकता। और ये दर्दनाक है। दर्द को सहने के मेरे अनुभवों की सीमा तक दर्दनाक। मैं अब मलबे में हूँ। उस जानवर का दर्द समझ सकता हूँ, जो मेरे भीतर कुचल गया है। मैं दर्द के मारे चीखता हूँ, लेकिन कोई मेरी आवाज़ नहीं सुन सकता। यह भ्रम का दर्द है, बेताल का दर्द, जहां कुछ घटा है, उससे उल्टी दिशा से आता हुआ। जिनके पैर में चोट लगी होती है, वे चोट के बरसों बाद भी दर्द को महसूस कर सकते हैं। वह महसूस करते-करते दर्द की उस जगह तक पहुंच जाते हैं, जहां कोई अंग-अवयव नहीं होता। ऐसा विभ्रमी दर्द उनके दिनों को ख़त्म कर देता है। जैसे कि मैं, उस घाव के दर्द को महसूस कर रहा हूँ, जो कभी लगा ही नहीं। मेरे पांव मलबे के भीतर कुचल गए हैं।

ये मेरे पूर्वाभास हैं। शायद अचानक बिना बताए आए किसी रॉकेट से मेरे मांस के लोथड़े नहीं उड़ेंगे। शायद एक दीवार धीरे, बहुत धीरे मुझ पर गिरेगी, मेरी पीड़ाएं अनंत बन जाएंगी, और मेरी कराह, मदद की पुकार सुनने वाला कोई नहीं होगा। हो सकता है कि वह मेरे पैर या मेरी बांह या मेरी खोपड़ी को कुचल दे। या वह दीवार ठीक मेरी छाती पर आकर बैठ जाए, और मैं कई-कई दिनों तक वैसे ही ज़िंदा पड़ा रहूँ, और किसी को मुझे खोजने की फुरसत ही न हो। शायद मेरे चश्मे का कांच टूट जाए, उसके टुकड़े मेरी आंखों में धंस जाएं और मुझे अंधा बना दें। मेरी पसलियों में लोहे की एक सलाख घुस जाए, या मलबे में छूटकर पिस गए मांस के लोथड़ों की तरह मुझे भुला दिया जाए।

मेरी लाश के साथ क्या होगा और आख़िर यह सब कैसे समाप्त होगा, इसे लेकर मैं इतना चिंतित क्यों हूँ? मुझे नहीं पता। मुझे एक व्यवस्थित अंत्येष्टि की इच्छा है, जिसमें वह मेरी पूरी साबूत देह, टुकड़ों में बंटी नहीं, को लकड़ी के एक ताबूत में, उस झंडे में लपेट कर रखें, जिसके चारों रंग साफ़ दिख रहे हों (भले उन रंगों का नाम कविता की उस पंक्ति से आए जो ठीक-ठीक उनके अर्थों को नहीं समझा पाई हो), और इस ताबूत को मेरे दोस्तों और दुश्मन की शकल वाले मेरे दोस्तों के कंधे उठाएं।

और मुझे लाल व पीले गुलाबों का हार चाहिए। मुझे सस्ते क्रिस्म का गुलाबी रंग नहीं चाहिए, न ही बैंगनी, क्योंकि ये दोनों ही रंग मृत्यु की गंध फैलाते हैं। और एक रेडियो अनाउंसर चाहिए जो कि बकवासी न हो, जिसकी आवाज़ बहुत भारी न हो, और जब वह दुख प्रकट करे, तो वह दुख की तरह ही लगे। मेरी आवाज़ के टेप के बीच वह भी थोड़ी-थोड़ी बातें करे। मैं एक शांत और व्यवस्थित अंत्येष्टि चाहता हूँ, जो कि बहुत बड़ी हो। मरने के बाद पहला दिन क्रिस्मत वाला हो, जिसमें लोगों में मेरी प्रशंसा करने के लिए स्पर्धा हो। वे एक दिन के लिए लड़ाके हों, एक दिन के लिए प्यार किए जाएं और एक दिन के लिए निर्दोष हों। कोई झूठ न हो, कोई शाप नहीं, कोई दुश्मनी नहीं। यह मेरे लिए भी अच्छा होगा क्योंकि मेरे बीबी-बच्चे नहीं। इससे मेरे दोस्त उस यातना से बच जाएंगे, जिसमें कि विधवा लंबा मातम मनाती है। इससे वे बच्चे भी बच जाएंगे, जो आदिवासी क्रिस्म की अफ़सरशाही द्वारा चलाई जा रही संस्थाओं के दरवाजे पर खड़े रहने का अपमान झेलते हैं। कितना अच्छा हूँ कि मैं अकेला हूँ, अकेला, अकेला। इसीलिए मेरी अंत्येष्टि बिलकुल

मुफ्त होनी चाहिए, किसी को भी दोतरफ़ा आभार व्यक्त करने की ज़रूरत नहीं, जिसमें लोग मेरी अंतिम यात्रा में पैदल चलने के बाद वापस अपने-अपने काम पर लग सकें। मैं चाहता हूँ कि मेरा ताबूत बड़ा आलीशान हो, जिसमें से झांककर मैं मातमियों को देख सकूँ, जैसा कि नाटककार तौफ़ीक़ अल-हकीम चाहते थे। मैं देखना चाहता हूँ कि वे कैसे खड़े होते हैं, कैसे चलते हैं, कैसे आहें भरते हैं और कैसे थूक से आंसू की लकीर बनाते हैं। मैं उनकी फुसफुसाहटों को सुनना चाहूँगा- पक्का औरतखोर था, कपड़ों की पसंद के मामले में कैसे नकचढ़ा था, उसके घर का क़ालीन इतना गुदाज़ था कि आप घुटनों तक उसमें धंस जाएं, फ्रेंच रिविएरा में इसका एक बंगला था, स्पेन में कोठी और ज्यूरीख में एक गुप्त बैंक अकाउंट। इसके पास एक गुप्त प्राइवेट प्लेन भी था, और पांच लक्ज़री कारें, जिन्हें वह बैरूत के गैरेज में लोगों से छिपाकर रखता था। पता नहीं, पर शायद ग्रीस में इसके पास एक यॉट भी था और इसके घर में इतनी सीपियां थीं कि पूरा एक रिफ़्यूजी कैंप ही बन जाए। यह औरतों से बहुत झूठ बोलता था। कवि मर गया और उसके साथ उसकी कविता भी। अब बचा क्या है इसका? इसका रोल खत्म, अब हम इसकी कहानियां सुना करेंगे बस। वह तो अपनी कविता के साथ ही क़ब्र में धंस गया। ख़ैर, उसकी नाक बहुत लंबी थी और ज़बान भी। जब कल्पनाओं को ढीला छोड़ दिया जाएगा, तो मैं इससे भी ज़्यादा कड़वी बातें सुनूँगा। मैं अपने ताबूत में मुस्कराऊँगा और कहना चाहूँगा- बस! मैं जिंदगी में लौटने की एक कोशिश करूँगा, पर लौट नहीं पाऊँगा।

* * *

चौतीस साल पहले जब पहली बार मैं बैरूत आया था, तब मेरी उम्र छह साल थी। उन्होंने मुझे टोपी पहनाई और अल-बुर्ज चौराहे पर छोड़ दिया। तब वहां स्ट्रीटकार होती थी। मैं स्ट्रीटकार में बैठा। तब वह लोहे की बनी दो पटरियों पर चला करती थी। वह आगे बढ़ी, लेकिन मुझे पता नहीं था कि वह कहां जा रही है। वह लोहे की दो पटरियों पर चलती थी। क्या पता, चलते-चलते आगे बढ़ गई। पता नहीं, इतना बड़ा और शोरदार कैसे चलता था। उसमें बैठे-बैठे मैंने कई इमारतों और खिड़कियों को देखा था, उनमें से कई जोड़ी आंखों को झांकते हुए। कई पेड़ देखे थे। स्ट्रीटकार दौड़ रही थी, इमारतें भी दौड़ रही थीं। उसके साथ हर चीज़ दौड़ रही थी। स्ट्रीटकार लौटकर वहीं आई, जहां मुझे टोपी पहनाई गई थी। मेरे दादाजी ने बहुत उत्साह के साथ मुझे उतारा। उसके बाद एक कार में बिठाया। हम दामुर गए। बैरूत के मुक़ाबले दामुर छोटा था और ज़्यादा सुंदर था, क्योंकि यहां समुद्र काफ़ी विशाल था। लेकिन यहां स्ट्रीटकार नहीं थी। मुझे दामुर के बारे में और कुछ याद नहीं, सिवाय समंदर और केले के बाग़ानों के। केले के पत्ते कितने बड़े थे! और उसके लाल फूल मकानों की दीवार पर चढ़ जाते थे।

दस साल पहले जब मैं बैरूत आया, तो सबसे पहला काम ये किया कि एक टैक्सी रोकी और उससे कहा कि मुझे दामुर ले चलो। मैं काहिरा से आया था और एक ऐसे छोटे लड़के के क़दमों के निशान खोजना चाहता था, जिसने अपने नाप से बड़े, ख़ुद से बड़े डग भर लिए थे, जो कि उसकी उम्र के लिहाज़ से ज़्यादा थे। मैं क्या खोज रहा था? उन क़दमों को या उस लड़के को? या उन लोगों की तरह, जिन्होंने एक चट्टानी अरण्य को पार कर लिया था, उस चीज़ तक पहुंचने के लिए, जहां तक वे कभी पहुंच नहीं पाए। समंदर अपनी जगह था, दामुर को लहरों से धक्का मारता हुआ, उसे और बड़ा बनाता हुआ। मैं बड़ा हो गया था। मैं एक कवि बन गया था, जो एक लड़के को खोज रहा था, जो कि उसी के भीतर रहता था, जो पीछे नहीं छूट गया और फिर खो गया। यहीं मैंने अपने ज़हन पर पड़ी पहली छापों को सींचा था और यहीं पहले सबक लिए थे। यही वह जगह थी, जहां बाग़ानों की मालकिन ने मुझे चूमा था। यहीं मैंने पहली बार गुलाब चुराए थे। इसी जगह पर मेरे दादाजी पुश्तैनी जगह पर लौटने की घोषणा की प्रतीक्षा करते रहे, पर वह घोषणा कभी नहीं हुई।

हम गैलिली के गांवों से आए थे। एक रात हमें तालाब के पास सोकर गुजारनी पड़ी थी, सूअरों और गायों के बीच। अगली सुबह हम उत्तर की ओर बढ़ गए। लेबनान के एक बंदरगाह टायर में मैंने शहतूत तोड़े थे। फिर हमारा सफ़र जिज़ीन में जाकर रुका। वहां पहुंचने से पहले मैंने कभी आसमान से गिरती बर्फ़ नहीं देखी थी। जिज़ीन तो बर्फ़ का खेत था और वहां एक झरना भी था। मैंने इससे पहले कभी झरना भी नहीं देखा था। मुझे ये भी नहीं पता था कि सेब डालियों से लटकते हैं, मुझे लगता था कि ये बक्सों में ही पैदा होते हैं। हमने बांस की बनी कुछ टोकरियां लीं और डालियों से सेब तोड़े। *मुझे ये चाहिए। मुझे ये चाहिए।* पहाड़ के पैर के निकलकर लाल खुपैल की छतों वाले मकानों के बीच गुज़रने वाली पानी की धारा में मैं उन्हें धोता। सर्दियों में हम ठंड की चुभन को बर्दाश्त नहीं कर पाते, इसलिए एक दिन दामुर चले आए। सूरज डूबता और समय के बीच से समय चुरा लेता। प्रेम में नहाई किसी औरत की देह की तरह समंदर कराहता रहता और रात को रोने लगता, रात-भर रोता रहता।

वहां लड़का अपने परिवार के बीच गया। एक दूरी में। उस दूरी में, जिसे वह कभी किसी दूरी में तलाश नहीं पाया। कंटीले बाड़ों के उस तरफ़ क़ैद ज़मीन के एक टुकड़े को आस से निहारते-निहारते मेरे दादाजी गुज़र गए। ऐसी ज़मीन, जिसके छिलके को उन्होंने गेहूं, सीसम, मक्का, तरबूज और शहद की बूंदों से सख्त सेब के छिलके में बदल दिया था। अपनी मुरझाती हुई उंगलियों पर सूर्यास्त, मौसम और धड़कनों को गिनते हुए मेरे दादाजी मर गए। वह किसी शाख से निष्कासित फल की तरह गिर गए। उन्होंने उनके हृदय को नष्ट कर दिया। वह यहां दामुर में इंतज़ार कर-करके थक गए थे। उन्होंने दोस्तों, पानी की पाइप और बच्चों से अलविदा कहा और मुझे लेकर उस चीज़ को खोजने वहां गए, जो उनकी नहीं थी। यहां बाहर से आए लोगों की तादाद बढ़ रही थी, रिफ्यूजी कैंप का आकार भी।* एक युद्ध हुआ, फिर दूसरा, तीसरा, चौथा। मातृभूमि दूर, और दूर होती जा रही थी, और बच्चे अपनी मां के दूध से दूर, और दूर होते गए। उन्होंने यूएनआरडब्ल्यू (यूनाइटेड नेशंस रिलीफ एंड वर्क्स एजेंसी) का दूध चख लिया था। सो, उन्होंने लगातार दूर होती मातृभूमि को फिर से पाने से के लिए बंदूकें खरीद लीं। खुद के दुबारा होने में अपनी पहचान बनाई, मातृभूमि की पुनर्चना की, और उसके रास्ते पर चल दिए, सिर्फ़ गृहयुद्ध के संरक्षकों द्वारा वह रास्ता बाधित कर दिए जाने के लिए। उन्होंने अपने क्रदमों की हिफ़ाज़त की, एक रास्ते से कटकर दूसरा रास्ता निकलता रहा, अनाथ बच्चे अनाथ बच्चों की चमड़ी के भीतर रहे और एक रिफ्यूजी कैंप दूसरे रिफ्यूजी कैंप में बदलता रहा।

* * *

शरण की तलाश में एक जगह से दूसरी जगह भटकते, शहीदों के बच्चों और तेल जातर के बच गए लोगों को दामुर के मलबों के बीच एक नई शरण मिली है। वे अपने साथ अपनी थकान, निराशा और शरीर के उन अंगों को भी लेते आए हैं, जिन्हें चाकू और तलवार अलग करना भूल गए। वे ऐसी जगह की तलाश में आए हैं, जहां वे सो सकें, एक खुला चौराहा हो, जहां हवा आ सके और देशभक्ति के गीत गूंज सकें। पर जो काम आदिम हथियार करना भूल गए, वे काम लड़ाकू जहाज़ कर रहे हैं। सारे लोग कहां जा रहे हैं? मेरे लोगों को नरसंहार से वध की ओर ले जाया जा रहा है, इसके बाद भी ये लोग मलबों से पटी जगहों पर नए बच्चे पैदा कर रहे हैं, हवा में जीत के संकेत उछाल रहे हैं और शादी-ब्याह के जश्नों की तैयारी कर रहे हैं।

दस साल से मैं बैरूत में, सीमेंट के ऊबड़खाबड़पने के बीच रह रहा हूँ। मैं बैरूत को जितना उधेड़ने की कोशिश करता हूँ, खुद से उतना ही दूर होता चला जाता हूँ। यह कोई शहर है या सिर्फ़ एक मुखौटा है। निर्वासन की एक जगह है या फिर कोई गीत है? कितनी जल्दी ये ख़त्म हो जाता है और कितनी जल्दी शुरू

हो जाता है? इसका उल्टा भी उतना ही सच है।

दूसरे शहरों में स्मृतियां कागज़ के एक टुकड़े में शरण ले सकती हैं। आप एक सफ़ेद ख़ालीपन में किसी चीज़ का इंतज़ार करते बैठे हैं और गुज़रता हुआ एक विचार आप पर झुका चला आता है। आप उसे धर लेते हैं, कहीं छूट न जाए, दिन गुज़रते हैं और आप उस विचार तक दोबारा जाते हैं, तो उसके स्रोत को पहचानते हैं, और उस शहर को धन्यवाद कहते हैं, जिसने आपको यह तोहफ़ा दिया। लेकिन बैरूत में आप बह जाते हैं, फिर बिखर जाते हैं। यहां एक ही चीज़ आपको थाम सकती है, और वह है पानी। स्मृतियां शहर की अस्त-व्यस्त हालत की तरह हो जाती हैं, फिर ऐसी बानी बोलती हैं कि आप पीछे छूटे सारे शब्दों को भूल जाएं।

बमुश्किल, आपका ध्यान इस ओर जाता है कि बैरूत ख़ूबसूरत भी है।

बमुश्किल, आप बैरूत में गूदे (विषयवस्तु) और छिलके (रूप) में अंतर कर पाते हैं।

यह पुराना नहीं है, और यह नया भी नहीं है।

जब कोई आपसे पूछता है कि क्या आप इससे प्यार करते हैं, तो आप चौंक जाते हैं और खुद से पूछते हैं, मैंने पहले कभी इस ओर ध्यान क्यों नहीं दिया? क्या मैं इससे प्यार करता हूँ? फिर आप इसके जवाब में एक सटीक भावना खोजते हैं, फिर आप भावशून्य हो जाते हैं और फिर आपको चक्कर आने लगता है। बमुश्किल, आप ज़रूरत महसूस करते हैं यह तय करने की कि आप बैरूत में हैं। आप इस शहर में हैं और इस बात के लिए किसी सबूत की ज़रूरत नहीं। और यह शहर भी आपमें है, इस बात के लिए भी किसी सबूत की ज़रूरत नहीं। आपको याद पड़ता है कि अगर यही सवाल आपसे काहिरा में किया गया होता, तो आप तुरंत लपककर अपनी बाल्कनी में गए होते और झांक कर देखते कि नील नदी अपनी जगह पर ही है या वहां से खिसक गई। अगर आपको नील नदी दिख गई, तो आप मान लेंगे कि आप काहिरा में ही हैं। लेकिन यहां... यहां आपको गोलियों की आवाज़ से ही पता चल जाएगा कि आप बैरूत में हैं। दीवारों पर गोलियों और नारों की आवाज़ चिपकी है।

यह कोई शहर है या अरब गली में बिना किसी योजना के बना हुआ रिफ्यूजी कैंप? या फिर यह पूरी तरह कुछ और ही है? यह कोई स्थिति है, कोई विचार, बदलाव है, पाठ से पैदा कोई फूल है या फिर कल्पनाओं को गड़बड़ा देने वाली कोई जवान औरत है?

क्या यही कारण है कि आज तक कोई इस शहर के लिए एक अदद गीत तक नहीं बना सका?

कितना आसान दिखता है यह शहर!

फिर भी यह एक ही जैसे छंद, तुक या लय वाले शब्दों से जुड़ने में कितनी हिचक के साथ छटपटाता है - बैरूत, याक़ूत (नीलमणि), ताबूत।

या इसलिए कि यह शहर यूँ ही तफ़रीह करते किसी गुज़रते शख्स को ख़ुद को सौंप देता है, जिसे यह लगने लगता है कि यह शहर उसका निजी आनंद है? सिर्फ़ इसके अपने लोग और भुला दिए गए पुराने नाम ही वंचित रहते हैं उस आश्चर्य से, जो बाक़ी लोगों पर सहज ही उतरता है।

मैं बैरूत को नहीं जानता और यह भी नहीं जानता कि मैं इससे प्यार करता हूँ या नहीं।

किसी राजनीतिक रिफ्यूजी के लिए यह एक कुर्सी है, जो कभी नहीं बदली जाएगी। या ज़्यादा सही तरीक़े से कहें, कुर्सी के लिए यहां राजनीतिक रिफ्यूजी हैं, जिन्हें वह कभी नहीं बदल सकती।

रिफ्यूजियों का व्यापार करने वालों के लिए यह जान लेने का अच्छा मौक़ा है कि ग़रीब अरब लोगों से वादा करके बहने वाली पचास के दशक की हवा, अब दुबारा इस रास्ते नहीं बहने वाली।

उस लेखक को जिसका देश एक क़ैद में है और जो इस क़ैद से थक गया है, उसे यह मान लेने की आज़ादी है कि वह आज़ाद है, बिना यह जाने की अब तक जो वह लड़ रहा था, तो आख़िर किस मोर्चे पर?

यहां एक भूतपूर्व कवि के लिए सारी संभावनाएं हैं कि वह पिस्तौल हथिया ले, एक अंगरक्षक पा ले, थोड़े पैसे मार ले, उसके बाद एक गिरोह का सरगना बन जाए। एक जगह किसी आलोचक को गोलियों से उड़ा दे और दूसरी जगह किसी और आलोचक को रिश्वत खिला दे।

एक पारंपरिक जवान औरत के लिए यहां ये संभावनाएं हैं कि वह अपना बुरका उतारकर बैग में रख ले, किसी हवाई जहाज़ के बोर्डिंग रैंप पर चढ़े और किसी होटल के कमरे में अपने प्रेमी के साथ लापता हो जाए।

यहां तस्करों के लिए तस्करी की सारी संभावनाएं हैं।

ग़रीबों के लिए और ज़्यादा ग़रीब होते जाने की।

बैरूत आने वाला हर आदमी, यहां अपने लिए एक ख़ास क्रिस्म का शहर पाता है, और हम नहीं जानते- कोई नहीं जान पाता- कि किस हद तक ये सारे शहर मिलकर बैरूत नाम का शहर बनाते हैं। रुदालियां और मातमी अब इस शहर पर नहीं रोते, क्योंकि वे अपनी स्मृतियों और निजी स्वार्थों पर रोया करते हैं।

बैरूत को कोई नहीं जानता। और उसे कोई खोज भी नहीं रहा। और शायद, यह शहर अपनी जगह पर है भी नहीं। युद्ध के दिनों में जाकर सबको यह अहसास हुआ कि वे बैरूत को नहीं जानते। और खुद बैरूत ने भी यह महसूस किया कि वह सिर्फ़ एक शहर, सिर्फ़ एक मातृभूमि, या पड़ोस के मुल्कों के लिए एक चौपाल नहीं था। यह अहसास हुआ कि एक खिड़की और उसके सामने की दूसरी खिड़की में उतनी दूरी हो सकती है, जितनी हमारे और वाशिंगटन के बीच। यह अहसास हुआ कि एक गली और उसके समांतर चल रही दूसरी गली के बीच होने वाली लड़ाई किसी ज़ियोनिस्ट (यहूदी संहिता का पालन करने वाले) और अरब राष्ट्रवादी के बीच की लड़ाई से कहीं ज़्यादा गहरी हो सकती है।

इसी युद्ध के बीच लड़ाकों को यह अहसास हुआ कि बैरूत और बैरूत के बीच शांति असंभव है।

और मात्र कुछ दिनों के लिए हुई संधि के दौरान जाकर लड़ाकों और प्रेक्षकों को अहसास हुआ कि यह लड़ाई कभी ख़त्म नहीं होने वाली और हार के संतुलन के बाहर, जीत असंभव है।

शायद हर किसी को अहसास हुआ कि बैरूत में कोई बैरूत नहीं है। पत्थर पर बैठी हुई औरत जो कि सूरजमुखी की तरह है और उस चीज़ के पीछे पड़ी है जो कि उसकी नहीं। इस औरत के लिए छद्म रूप बना-बनाकर प्रेमी और दुश्मन को एक ही तरह से घसीटने में कोई फ़र्क नहीं, कई बार उनके साथ या ख़िलाफ़ होकर और कई बार उनके साथ या ख़िलाफ़ न होकर।

ये शिल्प के लिए बना हुआ शिल्प है जो कि अभी शिल्प बन ही नहीं पाया, क्योंकि इसके भीतर का युद्ध - मेरा मतलब है इसके चारों ओर का- अभी जीता जा चुका है, अभी हारा जा चुका है। क्योंकि इसके भीतर जो अपरिवर्तनशील है, वही परिवर्तनशील है और जो स्थायी है, वही अस्थायी है।

या एक लहर को ही ले लें। उसे एक चट्टान पर रखे और तोड़ दें। कुल मिलाकर आप यही पाएंगे कि

आपके हाथ एक जादुई खेल में डूब रहे हैं, जिसका कोई आरंभ नहीं, कोई अंत नहीं।

प्रश्न : क्या यह आईना है?

उत्तर : उसी हद तक, जिसमें लहर को चट्टान कहा जा सके।

प्रश्न : क्या यह सड़क है?

उत्तर : उसी सीमा तक, जिसमें कविता को गली कहा जा सके।

प्रश्न : क्या यह झूठ बोलती है?

उत्तर : जब कोई उन बातों पर भरोसा करता है, जिन पर भरोसा नहीं किया जाना चाहिए।

लंबे युद्ध के दौरान हर कोई इसे अच्छी तरह समझ गया। मुझे उन दिनों ऐसा लगा कि खून और आग के परे, ये सारे चेहरे, जैसा कि वे आईने में दिखते हैं, उन सारी चीजों को देख लेंगे जो कि वे कभी नहीं देख पाए और अपने प्रतिबिंब होने के स्रोत को ही बदल डालेंगे। मुझे ऐसा लगा कि बैरूत पानी या रेगिस्तान के बीच एक द्वीप की तरह है। कि आग के चारों ओर घेरा बनाकर नाच रहे आदिवासी लोगों की निष्ठा उनके आदिवासी वंशों से हटकर मातृभूमि की तरफ जाएगी। कि मातृभूमि का विचार, राष्ट्र के विचार का हिस्सा बनेगा। और राष्ट्र उस अस्तित्व को पा लेगा, जिसके लिए किसी प्रमाण की आवश्यकता नहीं। जिसमें वह यह जान जाएगा कि उसके मित्र कौन हैं और शत्रु कौन। मुझे ऐसा लगा था कि ये सारे शहीद, ये नई भाषा और राख के ये ढेर हमारे लिए कम से कम एक प्रतीक बनकर उभरेगे। ऐसा लगा था कि ये सारे शहीद, ये नई भाषा और राख के ये ढेर हमारे लिए कम से कम एक प्रतीक बनकर उभरेगे। ऐसा लगा था, जैसे बदलाव की प्रक्रिया शुरू हो गई है, कि जैसे क्षेत्रीयतावाद की सीपी फूट गई है और उसमें से सारतत्त्व यानी मोती झलकने लगा है।

उस समय मुझे ऐसा लगा था।

मुझे ऐसा लगा था।

* * *

इसके बाद भी बैरूत के खून और वादों से ऊपर की ओर उठती हुई चिड़िया पूछती है, 'मैं खुली जगह में हूँ या किसी पिंजरे में?'

मैं बैरूत से गुजर रहा हूँ और पंखों से बने एक पिंजरे को देख रहा हूँ। यह 1980 का बसंत है। मेरे गीत उपहास उड़ाते हैं। मैं एक अकेला अजनबी बन गया हूँ।

- क्या मैंने गलतियाँ कीं?
- हाँ, बहुत सारी।
- यहाँ से चले जाओ।
- क्या युद्ध खत्म हो गया?
- सारे विजेता चले गए हैं और मातृभूमि का नए सिरे से जन्म हुआ है।
- मैं लौटकर कहाँ जाऊँ?
- अपने देश।
- मेरा देश कहाँ है?

- अरब राष्ट्र के भीतर।
- और फ़लीस्तीन?
- उसे तो शांति ने निगल लिया।

सिर्फ़ मैं ही अजनबी बना हूँ। मैं पेरिस में क्या करूँगा? तुम बैरूत में क्या करते हो? मैं लंदन में कितने दिन रहूँगा? जितने दिन तुम बैरूत में रहे।

मुझे बताओ : बैरूत के साथ क्या हुआ?

वह कहता है : वह बहुत मज़बूत हो गया।

मैं पूछता हूँ : क्या अरबवाद की विजय हुई, या...?

वह कहता है : न ये हुआ, न वो हुआ। इन इलाकों में बहने वाली हवाओं ने उसे जीत लिया, क्योंकि वह पानी के बीच एक द्वीप या रेगिस्तान के बीच एक नख़लिस्तान बनने की कुव्वत नहीं रखता था। तुम जहाँ से आए हो, वहाँ को लौट जाओ, क्योंकि यहाँ की गलियाँ तुम्हें खारिज करती हैं।

और अकेला मैं ही अजनबी बना।

कितनी ही बार अपनी शिकायतें मैंने रोके रखीं : लेबनानी भूमि फ़लीस्तीन से बेमेल क्यों रह सकती है? इजिप्त की रोटी फ़लीस्तीन की रोटी से बेमेल कैसे रह सकती है? सीरिया की छत फ़लीस्तीन की छत से बेमेल कैसे रह सकती है? फ़लीस्तीन खुद फ़लीस्तीन से बेमेल कैसे रह सकता है?

1980 के बसंत में मैं यहाँ कैसा अजनबी महसूस कर रहा हूँ। हवा चेतावनी देती है, हवाई अड्डे को जाने वाली सड़क चेतावनी देती है, और समंदर भी किसी बात की चेतावनी देता है। और अकेला मैं यहाँ अजनबी हूँ।

दीवारों पर लगी शहीदों की तस्वीरों और हाईवे के किनारे लगे साइनपोस्ट पर मातृभूमि के लिए लिखे शब्दों को सरकारी तख्खियाँ कुतर जाती हैं। बैरूत इस रास्ते गुज़रता है। मैं दक्षिण की उस लड़की को खोजता हूँ, जिसने अपना सरकारी पहचान पत्र खा लिया था। उसे सरकारी गीत गाते हुए पाता हूँ। वह एक बख़्तरबंद गाड़ी का इंतज़ार कर रही है, ताकि वह उसे ज़रन तक ले जा सके।

यक्रीनन मातृभूमि।

सुंदरता के नगीनों, वाक्पटुता और प्रोटोकॉल से ज़ड़ा वही ताज बैरूत को पहना दिया गया है, जिसके खिलाफ़ बैरूत ने यहाँ से गुज़रते वक्रत विद्रोह किया था। हर कोई उसी भेदभाव की तरफ़ लौट जाना चाहता है, जिसके कारण चार साल पहले युद्ध की चिंगारी भड़की थी। बैरूत एक बार फिर उसी भाषा की मातृभूमि है, जिसके खिलाफ़ उसने बगावत की थी। क्यों नहीं? क्यों नहीं? क्यों नहीं? और अब अचानक फ़लीस्तीन के कुछ इलाकों को छोड़कर, दक्षिण में शांति हो गई है। दक्षिण में शांति का राज होगा, भले फ़लीस्तीन में न हो।

मैं देखता हूँ कि बैरूत दक्षिण पर रो रहा है। मेरा मतलब है, मैं बुद्धिजीवियों और अफ़सरों को दक्षिण पर रोते देख रहा हूँ। अचानक उन्हें अहसास होता है कि बैरूत तो लेबनान की राजधानी है और दक्षिण का हिस्सा लेबनान में ही आता है। और मुझे याद आता है कि कैसे उन्होंने दक्षिण को भुला दिया था, जहाँ लड़ाकू जहाज़ वहाँ बम गिरा रहे थे। हद्दाद लैंड की स्थापना से पहले वे कैफ़े और बार में बैठकर बीयर पीते थे और बाइफ़रा* की यातनाओं पर चर्चा करते थे। उन दिनों मातृभूमि की अवधारणा ही इज़राइलियों को

चिढ़ा देती थी, जो मातृभूमि के लिए कभी किसी सीमा को नहीं मानते। तब मातृभूमि का अर्थ कर्तव्य था और कर्तव्य का अर्थ था दक्षिण को इजराइली टैंकों और जहाजों से बचाना। तब मातृभूमि की अवधारणा का अर्थ एक घर की तलाश मात्र नहीं था।

- तो इसमें नया क्या है, मेरे दोस्त?

- आरामदेय और विशाल इमारतें दक्षिण के शरणार्थियों से टुंसी हुई हैं, और शरणार्थी कभी किराया नहीं देते।

- तो इसमें नया क्या है, मेरे दोस्त?

नया दर्द, पुराने दर्द को दूर भगा देता है, नई समस्याएं, पुरानी समस्याओं को। और अकेले तुम ही अजनबी हो यहाँ।

ये सारे सवाल बैरूत के उस तिरस्कार से पैदा होते हैं, जो पुरानी समानता को बदल देने के लिए एक नई समानता की तलाश कर रहा है, पुरानी मातृभूमि को एक नई मातृभूमि से बदल देने के लिए। यह उन सीपियों की तलाश है जहाँ से वे आए हैं, और कोई उन पर उसी सीमा तक दोष मढ़ सकता है, जिस सीमा तक किसी को उन बातों पर विश्वास का अधिकार है, जिन पर वह विश्वास करता है। उनका दावा है कि वादों की जंग अब पूरी हो गई है और राज्य सत्ता का निर्माण शुरू हो गया है। अभी भी आईना अपने सामने की चीजों के अलावा और किसी चीज का अक्स नहीं बनाता।

और पूरा आसमान ही एक विशाल पिंजरा है।

* * *

होटल कमोदोर जहाँ विदेशी पत्रकारों का हुजूम लगा रहता है, एक अमेरिकी पत्रकार मुझसे पूछता है:

- इन दिनों क्या लिख रहे हैं कवि महोदय?

- मैं अपनी चुप्पी लिख रहा हूँ।

- आपका मतलब यह है कि इस वक्रत बंदूकों को ही बोलना चाहिए?

- हाँ, क्योंकि उनकी आवाज़ मेरी आवाज़ से ज़्यादा ऊँची है।

- तो आप क्या कर रहे हैं?

- स्थिरता को पुकार रहा हूँ।

- क्या आप यह युद्ध जीत जाएंगे?

- नहीं। अहम बात है डटे रहना। डटे रहना अपने आप में जीत होती है।

- उसके बाद क्या होगा?

- नए युग की शुरुआत।

- फिर आप वापस कविता लिखना कब शुरू करेंगे?

- बंदूकों को थोड़ा चुप हो जाने दीजिए। जब मेरी चुप्पी का विस्फोट होगा। चुप्पी, जिसमें ये सारी आवाज़ें घुली हुई हैं। जब मैं अपने लिए एक भाषा तलाश लूंगा।

- तब तक आपकी कोई भूमिका नहीं?

- नहीं, कविता में मेरी इस वक़्त कोई भूमिका नहीं। मेरी भूमिका कविता से बाहर है। मेरी भूमिका वहां होने में है, नागरिकों और लड़ाकों के बीच।

कुछ बुद्धिजीवियों को यह मौक़ा पुराने हिसाब-किताब चुकता करने के लिए सही लगा। वे पत्रकारों के सामने ही एक-दूसरे पर छींटे उछालने लगे। हमें उन पर व्यर्थ में चिल्लाना पड़ा, चुप हो जाइए। बकवास बंद कीजिए। बैरूत पर क़ब्ज़ा करने वाले लेखक नहीं हैं। बुरे से बुरा क्या होगा, आपके लेखन को साहित्य नहीं माना जाएगा। अच्छे से अच्छी स्थिति में मान भी लिया, तो इससे आपका लेखन लड़ाकू जहाज़ उड़ाने वाली तोप तो नहीं हो जाएगा।

पर वे पलटकर बोले, नहीं, यही सही समय है यह तय करने का कि कोई कवि या कविता क्रांतिकारी है या नहीं। कविता है, तो उसे इसी समय जन्म लेना चाहिए वरना उससे जन्म लेने का अधिकार छीन लेना चाहिए।

मैं फिर चिल्लाया, तो फिर आपने होमर को इलियड और ओडिसी लिखने का अधिकार क्यों दे दिया? लेखको, हर कोई एक ही तरीक़े से प्रतिक्रिया नहीं करता। अगर कोई ठीक युद्ध के बीच में लिख सकता है, तो उसे लिखने दीजिए। कोई बाद में लिखना चाहता है, तो बाद में सही। जहां तक मेरा मानना है, तो वह यह है कि - जो घायल हैं, प्यासे हैं, जो पानी, रोटी या छत की तलाश में भटक रहे हैं, वे आपसे कविता नहीं मांग रहे। जो लड़ रहे हैं, उन्हें अपनी जान की फ़िक्र है, आपकी कविता की नहीं। इस समय में सबसे बड़ी चीज़ जो आप कर सकते हैं, वह यह है कि उन प्यासों के लिए बीस लीटर पानी खोज लाइए। रोटी इकट्ठी करके उजड़े हुए लोगों के पास चलिए। इस युद्ध में हम हाशिए पर हैं, नगण्य। इस समय मानवीय प्रतिबद्धता चाहिए लेखकों, कलात्मक सुंदरता नहीं।

कौन हैं वे कवि, जो सर पर मंडराते युद्धक विमानों, बम विस्फोटों, सड़क पर जमा लाशों के बीच कमरे में बैठे कविता लिखते रहते हों।

ये बहस चलती रही। बाहर भी। और भीतर भी।

इसके बाद भी पाकिस्तान से आए मेरे पुराने दोस्त फ़ैज़ अहमद फ़ैज़ पूछते हैं, सारे कलाकार कहां चले गए?

कौन-से कलाकार, फ़ैज़?

उनका क्या करोगे?

भई, उन्हें इस युद्ध की विभीषिका को शहर की दीवारों पर रंगकर दिखाना चाहिए।

तुम्हें दिखता नहीं फ़ैज़, शहर में दीवारें बची हैं क्या? सारी दीवारें तो ज़मींदोज़ हो गईं।

* हद्दाद लैंड - दक्षिणी लेबनान का वह इलाक़ा, जिस पर लेबनान के ग़द्दर मेजर साद हद्दाद की मदद से इज़राइल ने 1978 में क़ब्ज़ा कर लिया था।

कुछ नई प्रगतिशील युवा प्रतिभाओं में गीत का नाम प्रमुख है। वे मूलतः पत्रकार हैं लेकिन अनुवादकर्म में माहिर हैं। कवि कथाकार के रूप में भी वे चुपचाप उभर रहे हैं। हिन्दी के वर्तमान परिदृश्य में कुछ युवा चिल्ला रहे हैं, उनके लिए लोग चिल्ला रहे हैं, लेकिन कुछ युवा खामोश हैं, धीर, गंभीर और रचनात्मक हैं। वास्तविक संघर्ष वाचाल और खामोशों के बीच हैं। गीत के पास गद्य की बहुत ताज़ा और चमकीली भाषा है। वे विचारवान और स्वप्नदर्शी हैं।